ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-3* June- 2021
Anthology : The Research

चित्रकला के विकास में वल्लभ सम्प्रदाय का योगदान

Contribution of Vallabh Sect in The Development of Painting

Date of Submission: 15/06/2021, Date of Acceptance: 25/06/2021, Date of Publication: 26/06/2021

बबिता सिंघल
सह आचार्य,
इतिहास विभाग,
राजकीय कला कन्या
महाविद्यालय, कोटा,
राजस्थान, भारत

सारांश

वल्लभ सम्प्रदाय में आराध्य की सेवा पद्धति में 'श्रृंगार, राग एवं भोग' इन तीन विधि-विधानों को प्रमुखता से स्वीकृत किया गया है। इस कारण विभिन्न ललित कलाओं को पुष्पित एवं पल्लवित होने के अवसर मिले हैं। जैसे चित्रकला, भित्ति चित्रांकन, सांझी कला, हवेली संगीत कला, पुष्प श्रृंगार कला, पाक कला आदि। ब्रज के सांस्कृतिक वैभव को जीवन्त बनाए रखने में तथा उसका निरन्तर विकास करने के लिए वल्लभ सम्प्रदाय में अन्य सम्प्रदायों की अपेक्षा अधिक सुन्दर व्यवस्था की गई है साथ ही इनके प्रवर्तक एवं अन्य धर्माचार्यों का कला प्रेम एवं संरक्षण देने की भावना भी मुख्य है।

In the Vallabh sect, in the service system of worship, these three rituals, 'Shringar, Raga and Bhog', have been accepted prominently. Due to this various fine arts have got opportunities to flourish and flourish. In order to keep the cultural splendor of Braj alive and for its continuous development, more beautiful arrangements have been made in the Vallabh sect than in other sects, as well as the spirit of giving love and patronage to their promoters and other religious leaders is also important.

मुख्य शब्द : वल्लभसम्प्रदाय, तिलकायतों, कृष्णभक्ति, कृष्णलीलाओं, श्रृंगार, सेव्यस्वरूप, चित्रशैली, संरक्षण, रेखाचित्र, चित्रण ।

Vallabhasampradaya, Tilakayats, Krishnabhakti, Krishnalilas, Shringar, Sevyasvarupa, painting style, protection, drawing, drawing.

उद्देश्य

धर्म और दर्शन भारतीय संस्कृति के मूलभूत और जीवन्ततत्व रहे हैं। 'धर्म' शब्द के अंतर्गतसभ्यता, संस्कृति, आचार. विचार, रहन .सहन, रीति.रिवाज तथा जीवन .प्रणाली की प्रक्रिया और निर्देशन प्रस्तुत होता है। सम्प्रदाय धर्म का पथ. विशेश होता है, सम्प्रदाय व्यक्तिको एक पथ प्रदान करता है, जिस पर चलकर वह धर्म के द्वारा निर्दिष्ट लक्ष्य तक पहुँच सके। वल्लभ सम्प्रदाय श्रीमद्भागवतानुमोदित एवं पूर्ण समर्पण सेवाभाव से परिपुष्ट प्रेमा भक्तिमार्गी वैष्णव साधना सम्प्रदाय है। इसके आराध्य श्रीकृष्ण हैं, ब्रज इसका धाम है तथा श्रीमद्भागवत इसका आधार ग्रन्थ है। वल्लभ सम्प्रदाय ने प्रत्येक सम.विषम राजनीतिक स्थिति में भी हिन्दू धर्म को संरक्षित करने का अथक प्रयास किया तथा भारतीय कला, संस्कृति एवं साहित्य के विकास में वल्लभ सम्प्रदाय के धर्माचार्यों ने अप्रतिम योगदान दिया।

इस संदर्भ में चित्रकला के विकास में वल्लभ सम्प्रदाय के धर्माचार्यो के योगदान को एवं चित्रकला के विकास के विविध आयामों को गहनता से विवेचित करना इस शोध–पत्र का मूल उद्देश्य है।

प्रस्तावना

चित्रकला के विकास तथा उसके एक पृथक एवं निष्चित स्वरूप के निर्धारण में वल्लभ सम्प्रदाय की प्रधान पीठ के तिलकायतों का उल्लेखनीय योगदान रहा है। जिस प्रकार राजस्थान की विभिन्न चित्र शैलियाँ अनेक छोटी-बड़ी रियासतों के शासकों के संरक्षण में उनकी व्यक्तिगत रूचि के अनुरूप विकसित हुई तथा उनका एक निष्चित स्वरूप निर्धारित हो गया, उसी प्रकार नाथद्वारा में विकसित यह चित्रण परम्परा यहाँ के तिलकायतों द्वारा नियंत्रित एवं संरक्षित रही है।

वल्लभ सम्प्रदाय की प्रधान पीठ नाथद्वारा में विकसित चित्रशैली को भारतीय परम्परागत चित्रकला की एक प्रमुख धारा के रूप में विष्व स्तरीय ख्याति प्राप्त है। सम्प्रदाय के प्रधान सेव्य-स्वरूप श्रीनाथजी की विभिन्न श्रृंगार छवियाँ, उत्सव एवं भागवत में वर्णित श्रीकृष्ण की बाल-किशोर लीलाएँ चित्रांकन परम्परा के प्रमुख विषय हैं। नाथद्वारा (मेवाड़) में सर्वाधिक कृतियाँ, श्रीनाथजी के विभिन्न श्रृंगार, कृष्ण भक्ति तथा श्रीकृष्ण की विभिन्न लीलाओं के आधार पर चित्रित हुई हैं।[1] पुष्टिमार्गानुयायियों की मान्यतानुसार यमुनाजी को भक्ति, शक्ति स्वरूपिणी माना गया, उसी स्वरूप को चित्रकारों ने बड़ी कुशलता से चित्रित किया। इसके साथ ही श्रीनाथजी के (रूपांकन) व्यक्ति चित्रों की बहुलता भी है। नाथद्वारा के चित्रकारों ने भारत के विविध स्थानों पर विराजे प्रभु के सप्त स्वरूपों एवं अनेक सेव्य रूपों का चित्रण भी बड़े मनोयोग से किया है। शुद्धाद्वैत पुष्टिमार्ग के संस्थापक श्रीमद्वल्लभाचार्य जी के ज्येष्ठ पुत्र श्री गोपीनाथ जी के समय से चित्र सेवा एक नियमित क्रिया के रूप में प्रारम्भ हुई थी।[2] उन्होंने चित्रसेवा को प्रोत्साहन देकर स्वरूप के चित्रांकन को प्रचारित किया था। श्रीगोपीनाथ जी के बाद चित्रकला को सम्प्रदाय की एक आवष्यक गतिविधि के रूप में शामिल करने का श्रेय श्री विट्ठलनाथजी को प्राप्त है। उन्होंने सम्प्रदाय की सेवा पद्धति के विस्तार में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर उसमें राग, भोग और श्रृंगार के अनेक रूपों का समावेश किया था। वे स्वयं एक दक्ष चित्रकार थे। उनके द्वारा चित्रित भगवान कृष्ण के शिशु रूप का एक चित्र आज भी मुम्बई के एक उपनगर कांदीवली मन्दिर हवेली में सुरक्षित है। उसी संग्रह में उनका एक रेखाचित्र भी सुरक्षित है।[3]

चित्रकला के विकास में श्री गुसाईंजी के पष्चात् महत्वपूर्ण भूमिका महाप्रभु श्री हरिरायजी की रही। उन्होंने नवनिर्मित हवेली के विभिन्न भागों में स्वयं के निर्देशन में चित्रकारों से हवेली में भित्ति चित्रण करवाया तथा उनकी सम्प्रदाय की मूल भावना तथा दर्शन के अनुसार विशद् व्याख्या की।

वल्लभ सम्प्रदायी चित्रकला की दृष्टि से श्री गोवर्धनेशजी का काल अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा। नाथद्वारा चित्रशैली के बहुत सारे प्रारम्भिक चित्रों को इसी युग से सम्बन्धित किया जा सकता है। अनेक उच्चकोटि के कलाकारों ने इनके निर्देशन में सम्प्रदाय की चित्रकला को नए आयाम प्रदान किये थे। ये चित्र सौन्दर्य भाव से ओत-प्रोत हैं। परोक्ष रूप से इनमें ब्रज क्षेत्रीय लोक शैली का भी प्रभाव परिलक्षित होता है। इनमें मथुरा चित्रशैली के 'बास-रिलीप' एवं 'टेराकोटा' का भी प्रभाव दिखाई देता है।

श्री गोवर्धनेशजी ने सन् 1750 में सर्वप्रथम सप्त स्वरूपोत्सव का आयोजन किया व एक भव्य छप्पन भोग सप्त निधियों को भेंट किया था। उस महत्त्वपूर्ण अवसर का एक लघु चित्र अहमदाबाद निवासी श्री अमित अम्बालाल शाह के पास सुरक्षित है। यह चित्र वल्लभ सम्प्रदायी चित्रकला के प्रारम्भिक युग की ओर इंगित करता है। इसमें ब्रज की लोक चित्रशैली का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। गोस्वामीगण गाजे-बाजे के साथ पालकियों में पुष्टि स्वरूपों को गोवर्धन पूजा के चौक में लेकर आए हैं। निज मन्दिर में सात स्वरूपों के साथ श्रीनाथजी छप्पन भोग आरोगते हुए की झांकी प्रस्तुत की गई है।[4] गोवर्धन पूजा चौक में गायों के समूह का अंकन प्रभावशाली बन पड़ा है, जिसे देखकर लगता है कि इस मत की चित्रकला में गाय चित्रण का एक विशिष्ट स्वरूप अपने प्रारम्भिक काल में ही निर्धारित हो चुका था। सम्पूर्ण चित्र में उत्साह एवं उमंग से भरपूर महोत्सव का वातारण सृजित करने में चित्रकार पूरी तरह सफल हुआ है।

उस समय के चित्रों का प्रमुख आकर्षण उनका सादापन एवं शुद्ध रंगों का सशक्त प्रयोग किया जाना था जिससे उन्हें विशिष्टता मिली थी। उस काल के जो स्वरूप-चित्र उपलब्ध हुए हैं उनसे प्रतीत होता है कि उन चित्रकारों की कल्पनाशीलता पुष्टि सम्प्रदाय के दर्शन पर आधारित थी। सभी चित्रों में ऐसी मान्यता उभर कर उजागर होती है कि पुष्टि सम्प्रदाय के परम आराध्य श्रीनाथजी का स्वरूप जीवन्त देव-स्वरूप है। प्रायः सभी चित्रों में श्रीकृष्ण को एक हष्ट-पुष्ट, गोल-मटोल, स्वस्थ बालक के रूप में चित्रित किया गया है।

श्री तिलकायत दाऊजी स्वयं कला कौशल के महान संरक्षक, जानकार थे और उनकी चित्रकला के प्रति गहन रूचि थी। श्रीनाथजी की मन्दिर-हवेली की साज-सज्जा में उनके द्वारा चयनित ग्यारह चित्रकारों की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रही थी। इन्होंने अपने निर्देशन में भित्ति चित्रों का अंकन करवाया था। जिनमें 'रामबोला' नामक स्थान विशेष उल्लेखनीय है।[5]

तिलकायत श्री गोवर्धनलाल जी के समय में चित्रकला ने उन्नति की पराकाष्ठा को छू लिया था । इनका कला के प्रति काफी अनुराग था। वे उत्कृष्ट कोटि के कलात्मक कार्य के लिए दक्ष कलाकारों को विशेष भेंट और नकद पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित करते थे। वे बाहर से आने वाले कलाकारों को भी जरी की पगडी, सोने का कड़ा, उपरना (श्रीनाथ जी का प्रसादी वस्त्र) तथा पान का बीड़ा प्रदान कर स्वयं अपने हाथों पारम्परिक तरीके से सम्मानित करते थे।[6]

उक्त तिलकायत के काल में अनेक उत्कृष्ट कलात्मक चित्रों का सृजन हुआ जिसमें 'सचित्र भागवत' एक प्रमुख कृति है। चित्रकार श्री सुखदेव एवं घासीरामजी के निर्देशन में यहाँ के चुनिन्दा चित्रकार दल ने 35 वर्षों तक निरन्तर कार्य करते हुए इन चित्रों को तैयार किया। उक्त कृति स्थानीय मोती महल के विद्या विभाग के अन्तर्गत 'निज पुस्तकालय एवं चित्र संग्रहालय' में सुरक्षित है। इसके अतिरिक्त 'फूलधर' में भोजनथाली नामक चित्र, 'महाप्रभूजी के बैठक' के चित्र तथा 'कृष्ण और बलराम' के चित्र विशेष उल्लेखनीय हैं।[7]

यही चित्र शैली एवं रंग योजना तिलकायत श्री गोविन्दलाल जी और तिलकायत श्रीगिरधर जी तक बिना किसी महत्त्वपूर्ण बदलाव के निरन्तर आगे प्रसारित होती रही। तिलकायत श्री दामोदरजी द्वितीय के काल में पुनः नाथद्वारीय चित्रों में उत्थान नजर आता है। श्री दामोदरजी द्वितीय के तिलकायत काल में चित्रकला ने विकास और

सम्पन्नता के एक नवीन युग में प्रवेश किया। इस काल में नाथद्वारा के चित्रकारों ने कोटा स्कूल की शैलीगत परिपाटी को अपने चित्रों में अपना कर परिवर्तनों को स्थान दिया। श्री दामोदर जी, जो दाउजी द्वितीय के नाम से विख्यात हैं, के समय में नाथद्वारा कला उन्नत अवस्था को पहुँची थी। उन्होंने सात स्वरूप एकत्रित कर छप्पनभोग का भव्य मनोरथ आयोजित किया था।

सप्त स्वरूप स्मृति को सम्प्रदाय में चिर-स्थायित्व प्रदान करने वाला एक महत्त्वपूर्ण चित्र विषय तिलकायत दाऊजी के समय ही सम्प्रदाय को समर्पित चित्रकारों ने अपनी तूलिका से अमर बनाया जो अनेक भित्ति चित्रों, लघु चित्रों व पिछवाइयों के रूप में उपलब्ध है। इसमें श्रीनाथजी के साथ सप्त स्वरूपों को अन्नकूट अरोगते प्रदर्शित किया गया है। इसी चित्र में तिलकायत श्रीदाऊजी को अनेक गोस्वामियों के साथ सेवा-अर्पित करते हुए चित्रित किया गया है।[8] उस काल की चित्रकला के उत्कृष्ट चित्र मोतीमहल एवं कच्छवाही के महलों में लगे हैं।

श्री गोवर्धनलाल जी के समय महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि स्वरूप की मुखाकृति इतनी लम्बी बनने लगी कि उनकी चिबुक सीने से लगभग मिली हुई चित्रांकित होने लगी थी। एक अन्य बदलाव यह आया कि पहले श्रीनाथजी के चरण कमल चौड़े और खुले हुए चित्रित होते थे उन्हें मिला कर सीधा बनाय जाने लगा। सामान्य रूप से इस बदलाव के कारण प्रभु श्रीनाथजी का स्वरूप अत्यन्त सुन्दर तथा युवा रूप में दिखाई देता है। यह सखी भाव का सूचक लगता है। वर्तमान में भी चित्रकारों द्वारा श्रीनाथजी की भक्ति भावना में लीन होकर निस्वार्थ भावना से चित्रांकन किया जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्रीनाथजी के स्वरूप चित्रण में समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है तथा सम्प्रदाय के तिलकायतों के उचित मार्गदर्शन एवं संरक्षण के कारण कलाकारों की अन्वेषण सृजनात्मक क्षमता बढती गई तथा उत्तरोत्तर चित्रकला का विकास होता गया।

निष्कर्ष

प्रस्तुतशोध–पत्र वल्लभ सम्प्रदाय के तिलकायतों के उचित मार्गदर्शन एवं संरक्षण तथा कलाकारों की अन्वेषण सृजनात्मक क्षमता के कारण उत्तरोत्तर विकसित चित्रकला के विविध आयामोंको शोध परक अध्ययन कर तथ्यात्मक और प्रमाणिक तौरपर प्रकाश में लाने का प्रयास किया गया है। वल्लभ सम्प्रदाय श्रीमद्भागवतानुमोदित एवंपूर्णसमर्पणसेवाभाव से परिपुष्ट प्रेमा भक्तिमार्गी वैष्णव साधनासम्प्रदाय है। वल्लभसम्प्रदाय ने प्रत्येक सम. विशमराजनीतिक स्थिति में भी हिन्दू धर्म को संरक्षित करने तथाभारतीय संस्कृति एवं विविध कलाओं के संरक्षण व संवर्धन में अमूल्य योगदान दिया है। वल्लभसम्प्रदाय में श्रीनाथ जी की सेवाविधि में श्रृंगार, भोग व रागइन त्रिविध आयामों को महत्व देने के कारण विविध कलाओं का विकास हुआ।चित्रकारों ने श्रीनाथजी के प्रागट्य, आचार्यों के दैनिक जीवन और कृष्ण लीलाओं से सम्बंधित चित्रों को बनाया। जिसके फलस्वरु पराजस्थान में एक नई चित्रकला शैली का जन्म हुआ जो नाथ द्वारा शैली के नाम से प्रसिद्ध हुई। भारतीय कला एवं संस्कृति के इतिहास के परिदृष्य में चित्रकला के विकासमें वल्लभ सम्प्रदाय के योगदान को समुचित स्थान मिलने से कला एवं संस्कृति के इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ेगा।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *वैरागी, प्रभुदास- श्रीनाथद्वारा का सांस्कृतिक इतिहास, मन्दिर मण्डल नाथद्वारा, पृ.165*
2. *हीरक जयन्ती ग्रन्थ, साहित्य मंडल नाथद्वारा, पृ. 465*
3. *डॉ. आर.के.वशिष्ठ, 'मेवाड की चित्रांकन परम्परा', पृ. 8-15*
4. *हीरक जयन्ती ग्रन्थ, साहित्य मंडल नाथद्वारा, पृ. 460*
5. *वैरागी प्रभुदास- श्रीनाथद्वारा का सांस्कृतिक इतिहास, मन्दिर मण्डल नाथद्वारा, पृ.162*
6. *वही पृ.163*
7. *वैरागी, प्रभुदास- श्रीनाथद्वारा का सांस्कृतिक इतिहास, मन्दिर मण्डल नाथद्वारा, पृ.164*
8. *हीरक जयन्ती ग्रन्थ, साहित्य मंडल नाथद्वारा, पृ. 497*